(देश देशान्तरों में प्रचारित, सबसे सस्ता, उच्च कोटि का आध्यात्मिक-पत्र)

सन्देश नहीं मैं स्वर्ग लोक का लाई ।
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आई ॥

सम्पादक-श्रीराम शर्मा आचार्य । एक अंक ≡)

मथुरा, १ मार्च सन् १९४५ ई० | अंक ३

हमारे वचन और कार्य सच्चे होने चाहिए ।

कोई मनुष्य मुँह से बढ़-बढ़ कर बातें करे और पेट में असत्यता छिपाये हुए हो तो वह बनावट तक ठहर नहीं सकती । आवाज़ में, शब्दों के उपयोग में, चेहरे में तथा शरीर की हलचल में असत्य साफ़ देख पड़ते हैं । झूठे आदमी की वाणी में सिटपिटाहट, चेहरे पर निस्तेजता होती है, जाते हुए वह झिझकता है । आशङ्का और भय से उसका मन अस्थिर एवम् चिन्तित सा दिखाई है । असत्य बात कुछ ऐसी अस्वाभिक होती है कि सुनने वाले के मन में अनायास ही अविश्वास के ने लगते हैं । इस बीसवीं सदी में झूठ का बड़ा प्रचार है, बड़े कलात्मक ढङ्ग से झूठ बोला जाता उसे ऐसा नहीं बनाया जाता कि पकड़ में न आवे ।

स्मरण रखिए, झूठ आखिर झूठ ही है । वह आज नहीं तो कल जरूर खुल जायगा । असत्य का फोड़ होता है तो उस मनुष्य की सारी प्रतिष्ठा नष्ट हो जाती है, उसे अविश्वासी, टुच्चा और ओछा झा जाने लगता है । झूठ बोलने में तात्कालिक थोडा लाभ दिखाई पड़े तो भी आप उसकी ओर क्योंकि उस थोड़े लाभ के बदले में अनेक गुनी हानि होने की सम्भावना है । आप अपने र्यों द्वारा सचाई का परिचय कीजिए । सत्य उस बीज के समान है जो आज छोटा दीखता फल फूल कर महान वृक्ष बन जाता है ऊँचा

निरोग रहने के स्वर्ण सूत्र।

लें०—पं० राजकिशोर बाजपेयी 'राजेन्द्र'

१—रात्रि को अधिक जागने से शरीर क्षीण होता है, और आरोग्यता का ह्रास होता है।

२—यथा साध्य जल्दी उठने की आदत डालना चाहिये जल्दी उठना और जल्दी सोना स्वास्थ्य और सौन्दर्य का अचूक नुस्खा है।

३—सदैव हंसमुख और प्रसन्न चित्त रहना चाहिये। एक कहावत है कि "हंसो और मोटे बनो"

४—खाने के समय पीओ मत और पीने के समय खाओ मत।

५—भोजनापरांत तुरन्त पेशाब करना चाहिये। इससे पेट हल्का रहेगा और मूत्र-विकार नहीं होंगे।

६—अच्छी भली दशा में बेहोश या पागल बनना [नशा आदि का सेवन] तन्दुरुस्ती पर दाग लगाना है।

७—महीने में कम से कम दोबार तो अवश्य ही उपवास करना चाहिये। इससे शरीर अच्छा रहता है।

८—हरी २ हरियाली को कुछ देर तक लगातार देखते रहने से नेत्रों का तेज बढ़ता है। प्रति दिन अवश्य हरे भरे बागों और नदी झरनों आदि के दृश्यों को देखना चाहिये।

९—पैर धोने के प्रथम यदि सिर धोया जाय तो मस्तक कदापि कमजोर नहीं होता है।

१०—भोजनोपरान्त गीले हाथ आंखों पर फेरने से नेत्र-रोग नहीं होते हैं।

११—खुले पैरों से बहुत रास्तों पर चलने से जितने रोग दूर हो सकते हैं, उतने रोग किसी दवा से नहीं दूर होते। यदि प्रातःकाल ओस पर नंगे पैरों चला जाय तो स्वास्थ्य पर बड़ा अच्छा प्रभाव है। फेफड़े पुष्ट होते हैं। और जीवन और [illegible] बढ़ता है।

१२—दिन भर में [भोजन के समय थो जल पीकर] यदि पांच ग्लास पानी तुम पीते हो तो तुमको वैद्य बुलाने की आवश्यकता नहीं है।

१४—प्रातःकाल सूर्योदय के प्रथम उठना चाहिये।

१५—वेगों की [छींक जंभाई, पेशाब, दस्त, आदि] को कभी भी न रोकना चाहिये। रोकने से अनेकों भयंकर बीमारियां पैदा होती हुई कष्ट साध्य होती है।

१६—जिस देश में हम पैदा हुए हैं, वहीं आबहवा और उस देश की पैदा हुई अनाज जैसे अनुकूल हो सकते हैं वस्तुयें आदि नहीं हो सकती हैं।

१७—चलते फिरते समय यदि शरीर के किसी भाग में मोच आजाय तो तुरन्त गर्म जल से धो डालना चाहिये।

१८—भोजन में सदैव हरी शाक भाजिओं और फलों का उपयोग करना चाहिए। इससे शरीर की त्वचा का जमा हुआ मैल बाहर हो जाता है।

१९—नींद की स्वाभाविक वृत्ति बड़ी विचित्र है। वह शारीरिक परिश्रम से जितना प्रेम करती है, मानसिक परिश्रम से उतनी ही घृणा।

२०—यदि तुम चाहते हो कि कभी गठिया आदि न हो तो प्रति दिन चलने की मात्रा कम न करो।

२१—प्रातःकाल का स्नान स्वास्थ्य के लिए बड़ा ही उपयोगी है। स्नान करने के बाद ईश्वर-चिन्तवन अवश्य करना चाहिये इससे मन को शान्ति मिलती है, और आत्मा का विकास होता है। जिससे स्वास्थ्य पर बड़ा अच्छा प्रभाव पडता है।

२२—भोजन सदैव सादा करना चाहिये मिताहार करने से पेट में बिकार नहीं होते। यदि अजीर्ण हो तो बार २ थोडा जल पीना चाहिये आयुर्वेद में कहा है कि:—अजीर्णे में पानी पीना

अखण्ड-ज्योति

सुधा बीज बोने से पहिले, काल कूट पीना होगा।
पहिन मौत का मुकुट विश्व-हित, मानव को जीना होगा॥

मथुरा १ मार्च सन १९४५ ई०

इन परिस्थितियों में ही आगे बढ़िये।

'अगर मुझे अमुक सुविधाऐं मिलती तो मैं ...ता" इस प्रकार की बातें करने वाले एक ...त्म प्रवंचना किया करते हैं। अपनी नाला... भाग्य के ऊपर ईश्वर के ऊपर, थोप कर ... बनना चाहते हैं। यह एक असंभव मांग ... मुझे अमुक परिस्थिति मिलती तो ऐसा ...सी परिस्थिति की कल्पना की जा रही है ...। मिल जाँय तो वे भी अपूर्ण मालूम पड़ेगी ... उससे अच्छी स्थिति का अभाव प्रतीत ...जन लोगों के पास धन, विद्या, मित्र, पद ... मात्रा में मिले हुए हैं हम देखते हैं कि ...नेकों का जीवन बहुत अस्त व्यस्त ... जनक स्थिति में पड़ा हुआ है। धन ... उनके आनन्द की वृद्धि न कर सका ...जाल बन गया। जो सर्प विद्या नहीं ...स बहुत सांप होना भी खतरनाक ... कला का ज्ञान नहीं, उसे गरीबी में अभावग्रस्त अवस्था में थोड़ा, बहुत आनन्द तब भी है यदि वह सम्पन्न होता तो उन सम्पत्तियों का दुरुपयोग करके अपने को और भी अधिक विपत्ति ग्रस्त बना लेता।

यदि आपके पास आज मन चाही वस्तुऐं नहीं है तो निराश होने की कुछ आवश्यकता नहीं है। टूटी फूटी चीजें हैं उन्हीं की सहायता से अपनी कला को प्रदर्शित करना आरम्भ कर दीजिये। जब चारों ओर घोर घना अन्धकार छाया हुआ होता है तो वह दीपक जिसमें छदाम का दिया, आधे पैसे का तेल और दमड़ी की बत्ती है-कुल मिलाकर एक पैसे की भी पूँजी नहीं है—चमकता है, और अपने प्रकाश से लोगों के रुके हुए कामों को चालू कर देता है। जब कि हजारों पैसे के मूल्य वाली वस्तुऐं चुप चाप पड़ी होती हैं, यह एक पैसे की पूँजी वाला दीपक प्रकाशवान होता है, अपनी महत्ता प्रकट करता है, लोगों का प्यारा बनता है प्रसंशित होता है और अपने आस्तित्व को धन्य बनाता है। क्या दीपक ने कभी ऐसा रोना रोया कि मेरे पास इतने मन तेल होता, इतनी रुई होती, इतना बड़ा मेरा आकार होता तो ऐसा बड़ा प्रकाश करता? दीपक को कर्महीन नालायकों की भांति बेकार—शेखचिल्लियों के से मनसुवे बांधने की फुरसत नहीं है, वह अपनी आज की परिस्थिति, हैसियत, औकात को देखता है, उसका आदर करता है और अपनी केवल मात्रा एक पैसे की पूँजी से कार्य आरम्भ कर देता है। उसका कार्य छोटा है, वेशक, पर उस छोटेपन में भी सफलता का उतना ही अंश है जितना कि सूर्य और चन्द्र के चमकने की सफलता है। यदि आन्तरिक संतोष, धर्म, और परोपकार की दृष्टि से तुलना की जाय तो अपनी अपनी मर्यादा के अनुसार दोनों का ही कार्य एकसा है। दोनों का ही महत्व समान है, दोनों की सफलता एक सी है।

सच बात तो यह है कि अभाव ग्रस्त कठिनाइयों में पले हुए, साधन हीन व्यक्ति ही

नेता महात्मा, महापुरुष, सफल जीवन, मुक्ति पथ गामी हुए हैं।। कारण यह है कि विपरीत परिस्थितियों से टकराने पर मनुष्य की अन्तः प्रतिभा जागृत होती है, सुप्त शक्तियों का विकाश होता है। पत्थर पर रगड़ खाने वाला चाकू तेज होता है और वह अपने काम में अधिक कारगर साबित होता है उस का स्वभाव, अनुभव और दिमाग मँज कर साफ हो जाता है जिससे आगे बढ़ने में उसे बहुत सफलता मिलती है। इसके विपरीत जो लोग अमीर और साधन सम्पन्न घरों में पैदा होते हैं उन्हें जीवन की आवश्यक सामिग्रियां प्राप्त करने के लिए संघर्ष नहीं करना पड़ता, लाड़ दुलार, ऐश, आराम के कारण उनकी प्रतिभा निखरती नहीं, वरन् बन्द पानी की तरह सड़ जाती है या निष्क्रिय चाकू की तरह जङ्ग लगकर निकम्मी हो जाती है। आमतौर पर आज कल ऐसा देखा जाता है कि अमीरों के लड़के अपने जीवन में असफल रहते हैं और गरीबों के लड़के आगे चलकर चमक जाते हैं। पुराने जमाने में राजा रईस लोग अपने लड़कों को ऋषियों के आश्रम में इसलिए भेज देते थे कि वहां रहकर अभावग्रस्त जीवन व्यतीत करें और अपनी प्रतिभाको तीव्रबनावें।

हमारा उद्देश्य यह कहने का नहीं है कि अमीरी कोई बुरी चीज है और अमीरों के घर में पैदा होने वाले उन्नत जीवन नहीं बिता सकते। जहां साधन हैं वहाँ तो और भी जल्दी उन्नति होनी चाहिए। बढ़ई के पास बढ़िया लकड़ी और अच्छे औजार हों तब तो वह बहुत ही सुन्दर फर्नीचर तैयार करेगा यह तो निश्चित है। हमारा तात्पर्य केवल यह कहने का है कि यदि "जिन्दगी जीने की कला" आती हो तो अभाव, कठिनाई या विपरीत परिस्थिति भी कुछ बाधा नहीं डाल सकती. गरीबी या कठिनाई में साधनों की कमी का दोष है तो प्रतिमा को चमकाने का गुण भी है। अमीरी में साधनों की बाहुल्यता है तो लाड़ दुलार और ऐश आराम के कारण प्रतिमा परी चली जाने का दोष भी है। दोनों ही गुण दोष युक्त हैं। किन्तु जो जीवन जीना जानता है वह चाहे अमीर हो या गरीब, अच्छी परिस्थितियों में हो, कठिनाइयों में पड़ा हो कुछ भी क्यों न हो, हर स्थिति में अनुकूलता पैदा कर सकता है हर अव में उन्नति,सफलता और आनन्द प्राप्त कर सकता है।

आनन्द मय जीवन बिताने के लिए धन विद्या, अच्छा सहयोग, स्वास्थ्य आदि की आवश्यकता है परन्तु ऐसा न समझना चाहिए कि इन वस्तुओं के होने से ही जीवन आनन्द मय बन सकता है। एक अच्छी पुस्तक लिखने के लिए कागज दवात, कलम को आवश्यकता है परन्तु इन तीनों के इकट्ठे हो जाने से ही पुस्तक तैयार नहीं हो सकती। बुद्धिमान लेखक ही उत्तम पुस्तक के निर्माण में दवात कलम कागज तो एक गौण और हैं। जिसे पुस्तक लिखने की योग्यता है रुका न रहेगा, इन वस्तुओं को व आसानी से इकट्ठी कर लेगा। आज तक एक भी घटना किसी ने ऐसी न सुनी होगी कि अमुक लेखक इसलिए रचनाऐं न कर सका कि उसकी दवात में स्याही न थी। अगर कोई लेखक यों कहे कि—"क्या करूँ साहब मेरे पास कलम ही न थी, यदि कलम होती तो बहुत बढ़िया ग्रन्थ लिख देता।" तो उसकी इस बात पर कोई विश्वास न करेगा। भला कलम भी कोई ऐसी दुष्प्राप्य वस्तु है जिसे लेखक प्राप्त न कर सके। एक कहावत है कि "नाच न जाने आंगन टेढ़ा" जिसे नाचना नहीं आता वह अपनी अयोग्यता को यह कह कर छिपाता है कि—क्या करूँ आंगन टेढ़ा है। टेढ़ा ही सही, जिसे नाच आता है उसके लिए टेढ़ेपन के कारण कुछ वि अड़चन पड़ने की कोई बात नहीं है। इसी प्रकार जो जीवन की विद्या जानता है उसे साधनों का अभाव और विपरीत परिस्थितियों की शिकायत करने की कोई बात नहीं है। साधनों की आवश्यकता है बेशक, परन्तु इतनी नहीं कि उनके बिना प्रगति ही न हो सके।

ऋण तुम्हारा घातक शत्रु है।

(श्रीयुत महेश वर्मा, हर्बर्ट कालिज, कोटा)

ऋण लेते समय तुम्हारी आत्मा पर बोझ पड़ता है। फिर ज्यों ज्यों ऋण की वृद्धि होती है, तुम्हारी आत्मा का भार भी क्रमशः बढ़ता जाता है। ऋणी व्यक्ति अपनी इच्छानुसार शक्तियों का विकास नहीं कर पाता। एक गुप चुप वेदना प्रत्येक समय उसकी आत्मा को चूसा करती है। आत्म-संस्कार अभिलाषी साधक को ऋण का भार सहन करना किसी भांति भी उचित नहीं। यदि वह ऋणी रहेगा तो मानसिक क्षेत्र में एक भयानक आन्दोलन मचा रहेगा। उसे एकाग्रता कभी भी प्राप्त न हो सकेगी और दिव्य गुण दूर दूर भागते रहेंगे। कर्ज का तार जीवन भर न टूटेगा तथा वह उत्तरोत्तर बढ़ते हुए भार से दबकर निरन्तर छट पटाया करेगा।

प्रसिद्ध कवि गोल्डस्मिथ ऋण की भूल भुलय्या में बुरी तरह फँस गया तथा अपनी मूर्खता पर अन्त तक पछताता रहा। एक बार अपने भ्राता को अति मर्म-स्पर्शी शब्दों में निर्देश करते हुए उसने लिखा—"अपने पुत्र को मितव्यता सिखाओ। उसके समक्ष इधर उधर मारे २ फिरने वाले दरिद्र चचा का दृष्टांत रखो। साधारण स्थिति का व्यक्ति होकर मैंने कभी दान में अथवा मदिरा में कमी न की। मैं न्याय को रीति को भूल गया और मैंने अपनी दशा भी उन्हीं अभागों जैसी कर ली जिन्होंने मेरा कुछ उपकार न माना।"

निर्धनता तुम्हारी उन्नति के मार्ग में बाधक नहीं है। उन्नति के साधन इतने सस्ते हैं कि यदि तुम शुद्ध सङ्कल्प करो तो परिश्रम द्वारा उच्च बन सकते हो। तुम अपनी जीवन-यात्रा चाहे मोटे वस्त्र तथा सूखी रोटी खाकर काट डालो, किन्तु परमेश्वर के लिए भविष्य के भरोसे ऋण का साँप गले में न डालो।

चतुर पुरुष विपरीतता में अनुकूलता पैदा कर । विष को अमृत बना लेते हैं। संखिया, ा, धतूरा पारा सींगिया, हरताल आदि प्राण-घातक विषों से लोग रोगनाशक, आयुवर्धक रसायनें बनाते हैं। बालू में से चाँदी, कोयले में से हीरा निकालते हैं। सर्पों की विष थैली में से मणि प्राप्त करते हैं धरती की शुष्क और कठोर तह को खोदकर शीतल जल निकालते हैं, गरजते समुद्र के पेट में घुसकर मोती लाते हैं। दृष्टि पसार कर देखिये, आपको चारों ओर ऐसे कलाकार बिखरे हुए दिखाई पड़ेंगे जो तुच्छ चीजों की सहायता से बड़े महत्व पूर्ण कार्य करते हैं, ऐसे वीर पुरुषों की कमी नहीं है जो वज्र जैसी निष्ठुर परिस्थिति में प्रवेश करके विजय लक्ष्मी का वरण करते हैं। यदि आपकी इच्छा शक्ति ज़रा वजनदार हो तो आप भी इन्हीं कलाकारों और वीर पुरुषों की श्रेणी में सम्मिलित कर अपनी आज की सारी विपरीत परिस्थितियों अनुकूल बना सकते हैं। अपनी सारी शिकायतें, ाऐं, विवशताऐं आसानी के साथ संतोष, आशा समर्थता में बदल सकते हैं।

रिवर्तन संसार का नियम है और स्वतंत्रता क सुखों का आदि स्रोत। इनकी प्राप्ति के त्य और अहिंसा ही सर्व श्रेष्ठ साधन है।

× × ×

ोना होता है तब मैं एकान्त की खोज करता हूं रूना होता है तब मित्रों की।

× × ×

हमें मर जाने के बाद भी दुनियां की स्मृति हने की आकांक्षा है तो हमें या तो ऐसी नी चाहिये जो सब के पढ़ने के योग्य हो काम करना चाहिये जो लिपि वद्ध किये य हों।

× × ×

भोजन के संबंध में सावधानी।

थियोसोफिकल सोसाइटी के प्रसिद्ध नेता महात्मा लेडबीटर ने "वस्तु की आन्तरिक दशा" (Hidden Side of Things) नामक एक बहुत ही विवेकपूर्ण पुस्तक लिखी है, उसमें वे एक स्थल पर कहते हैं—जो कुछ भोजन हम खाते हैं, वह पाचन के उपरान्त शरीर का एक भाग बन जाता है। उस भोजन पर जिस प्रकार के सूक्ष्म प्रभाव अङ्कित होते हैं, वे भी हमारे शरीर में बस जाते हैं। लोग खाद्य वस्तुओं की केवल बाहरी सफाई पर ध्यान देते हैं किन्तु वे यह भूल जाते हैं कि बाहरी सफाई पर ध्यान देना जितना आवश्यक है, उससे कहीं अधिक आवश्यक उसकी आन्तरिक स्वच्छता पर ध्यान देना है। भारतवर्ष में भोजन की आन्तरिक स्वच्छता को अधिक महत्व दिया जाता है। हिन्दू लोग अपने से नीच विचार के लोगों के हाथ का बना हुआ या उनके साथ बैठकर खाना इसलिये ना पसंद करते हैं, कि उनके हीन विचारों से प्रभावित होने से भोजन की पवित्रता जाती रहेगी। विलायत में लोग बाहरी सफाई को ही पर्याप्त समझते हैं, वे नहीं जानते कि केवल इतने से ही भोज्य पदार्थ उत्तम गुण वाले नहीं बन जाते।

भोजन पर—उसके बनाने वाले का सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। विज्ञान बताता है कि मानवीय विद्युत का सब से अधिक प्रभाव उँगली को पोरुओं में से प्रवाहित होता है। जिस भोजन को बनाते समय बार बार हाथ से छुआ गया है, वह उसके अच्छे या बुरे असर से अवश्य ही प्रभावान्वित होगा। यह सच है कि अग्नि पर पकने से उसके बहुत से दोष जल जाते हैं, तो भी वह सम्पूर्ण प्रभाव से रहित नहीं हो जाता। केवल छूने से ही भोजन पर वैयक्तिक विद्युत असर नहीं पड़ा वरन् पास है। [?]गलों से भी वह आकर्षित होता है, क्योंकि भोजन मनुष्य की प्रिय वस्तु है और एक व्यक्ति जब दूसरे की थाली पर विशेष दिलचस्पी के सा[?] डालता है तो उस पर उसकी दृष्टि का असर है। यदि कोई दुखी होकर किसी को भोजन उसे खाने वाला जरूर रोगी होजायगा ऐसा देखा जाता है। किसी के हाथ से छीन कर या समाज में बैठ कर दूसरों के दिये बिना जो खाता है वह भी उन खाद्य पदार्थों के साथ एक प्रकार की ऐसी विद्युत ले जाता है जो करीब करीब विष का काम करता है और उससे वमन तक हो सकती है। एकान्त स्थान में या चौके में बैठकर भोजन करना इस दृष्टि से बहुत ही अच्छा है कि उस पर भीड़ भाड़ की दृष्टि नहीं पड़ती। हां, एक ही घर के या एक ही प्रकार के विचारों वाले लोग पास पास बैठ कर भोजन कर सकते हैं, क्योंकि उनमें एक दूसरे के प्रति पूर्ण सहानुभूति होती है और जातीय शील स्वभाव बहुत कुछ मिलते जुलते हैं, किन्तु दूसरे लोगों में ऐसा नहीं हो सकता। बनाने वाले या परोसने वाले के शारीरिक और मानसिक गुण, हाथों का प्रभाव, अनिवार्यतः भोजन पर पड़ता है। माता, बहिन या पत्नी के हाथ का परोसा हुआ रूखा सूखा भोजन बजार के हलुवे से अधिक गुणकारक होता है। क्योंकि उनकी प्रेम भावनाएं भी उनमें लिपट आती हैं, शबरी के बेरों की श्रीरामचन्द्र जी ने और विदुर के शाक की भगवान कृष्ण ने बड़ी प्रशंसा की है। यह प्रशंसा उनका मन बढ़ाने के लिए ही न थीं, वरन् सत्य भी थीं। प्रेम की सद्भावनाओं में इतने रुचिर तत्व होते हैं कि उनसे साधारण भोजन भी बहुत उच्चकोटि का बन जाता है। होटलोंमें खानेवाले व्यक्ति हमेशा पेटकीशिकायत करते हैं। कहते रहते हैं—होटलों में रोटी कच्ची मिलती है, शाक खराब मिलता है, इसलिए वह हमें हजम नहीं होती। किन्तु वास्तविक कारण दूसरा ही है। होटल वालों की नीयत यह रहती है कि ग्राहक कम भोजन खावे जिससे हमें अधिक लाभ हो। यह

भावनाऐं भोजन के साथ पेट में पहुंचती हैं और परिस्थिति उत्पन्न करती हैं कि खाने वाले की ...ट जावे। बाजारों में बिकने वाली मिठाइयां ...न्य दूसरी खाद्य वस्तुऐं प्रदर्शनाथ रक्खी जाती हैं। रास्ता निकलने वाले अधिकांश लोगों का मन उन्हें देखकर ललचाता है, परन्तु वे कारण वश उन्हें खरीद नहीं सकते। कई बार छोटे बच्चे और गरीब लोग उनकी ओर बड़ी ललचाई हुई दृष्टि से देखते हैं परन्तु अपनी बेवशी के कारण मन मारकर दुखी होते हुए देखते हुए चले जाते हैं। ...से व्यक्तियों की यह बेवशी भरी इच्छाऐं उस मिठाई आदि में प्रचुर मात्रा में लिपट जाती हैं। अनेक मनुष्यों की ऐसी भावनाओं को वह बाजारू भोजन अपने में इकट्ठा करता रहता है कुछ समय उपरान्त उनका एक बोझ जमा होजाता है और पूर्णतः अखाद्य बना देता है। 'बाजारू भोजन से ...मार पड़ते हैं' यह अनुभव बिलकुल सत्य है। ...का कारण और कुछ नहीं हो सकता है। घृत, ...न्न जैसी बलवर्द्धक वस्तुओं से बने हुए पदार्थ हानि पहुंचावें तो इसका भला इसके अतिरिक्त क्या कारण होगा ?

जब थाली सामने आवे तो थोड़ा सा जल लेकर चारों तरफ फेर दो और एक मिनट तक आँखें ... करके इस सामिग्री को परमात्मा के समर्पण ... हुए मन ही मन प्रार्थना करो कि—"हे प्रभो ! ... भोजन आपको समर्पित है। इसे पवित्र और ...मय बना दीजिए।" जब नेत्र खोलो तो विश्वास ... कि तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार कर ली गई है ...समें अब केवल लाभकारी तत्व ही रह गये ...च्चे हृदय से प्रभु की प्रार्थना करके और उसमें ... एवं अमृतत्व की भावना के उपरान्त जो ...किया जाता है, वह बहुत से हानिकारक ...से मुक्त हो जाता है और स्वास्थ्य की उन्नति ...ा करता है।

धर्म बनाम सम्प्रदाय।

धर्म वह है जिसके धारण करने से किसी वस्तु का अस्तित्व बना रहे। जैसे अग्नि का धर्म प्रकाश और गर्मी है। इन दोनों गुणों के रहते हुए अग्नि-अग्नि है अन्यथा राख का ढेर। इसी प्रकार मनुष्य का धर्म वह है जिससे उसमें मनुष्यत्व बना रहे, इन्सानियत कायम रहे। जिसके द्वारा मनुष्य में प्रेमभाव उत्पन्नहो,एक दूसरे की सेवा और सहायता की इच्छा पैदा हो वह ही धर्म है।

शास्त्र में लिखा है "यतोऽभ्युदय निश्रेयस सिद्धिः स धर्मः" अर्थात् जिसके द्वारा मनुष्य इस लोक में उन्नति करता हुआ, सांसारिक ऐश्वर्य भोगता हुआ, कल्याण पद को, स्वतंत्रता को, प्राप्त करे वह ही मनुष्य का धर्म है। दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि धर्म वह है जिसके द्वारा लोक और परलोक दोनों बनते हैं दोनों का आनन्द प्राप्त होता है। जो भी पुस्तक ऐसे धर्म का प्रतिपादन करे वह 'धर्मग्रन्थ' कहलाने को अधिकारिणी है चाहे वह वेद हो, पुराण हो, बाइबिल हो, कुरान हो, तौरेत हो, जिन्दावस्ता हो अथवा किसी आधुनिक लेखक की लिखी पुस्तक हो।

धर्म शब्द का वास्तविक अर्थ Virtue नेकी या सदाचार है अथवा Datey कर्तव्य या फर्ज है। धर्म को फिरका, मजहब, या सम्प्रदाय के अर्थ में प्रयोग करना इस पवित्र शब्द का अनर्थ करना है। फिरके बाज और धर्मात्मा में जमीन आसमान का अन्तर है। फिरके बाज आदमी अपनी बुद्धि बेच कर किसी पूर्व परिपाटी का अन्ध विश्वासी बन जाता है और अमुक पुस्तक या अमुक धर्माचार्य की भक्ति के नाम पर घृणित और जघन्य अत्याचार भी प्रसन्नता पूर्वक करता रहता है किन्तु धर्मात्मा पुरुष अपनी विवेक बुद्धि को प्रधानता देता है और किसी परिपाटी का खयाल किये बिना उचित, न्याय सगत और मनुष्यता से भरे हुए कार्यों को ही करता है।

जीवनदाता सूर्य ।

[ले०—डॉ श्री जटाशंकर नान्दी]

सूर्य हमारे जीवन और स्वास्थ्य के लिए उपयोगी है। यह हम प्रायः देखा करते हैं कि जो प्राणी और पेड़-पौधे खुली हवा और प्रकाश में रहते हैं वे उन प्राणियों और पेड़-पौधों की अपेक्षा अधिक अधिक उन्नत, स्वस्थ लहलहाते और हरे-भरे हैं जिन्हें कम धूप और हवा मिलती है। सूर्य-ग्रहण के समय प्राणी बड़े भयभीत हो उठते हैं, क्यों ? केवल इसी लिए कि सूर्य-प्रकाश के अभाव में रहने की कल्पना ही जीवन में अनुत्साह ला देती है। खुले प्रकाश में गाय, बछड़े तथा अन्य प्राणी कैसे खेलते-कूदते और किलकते हैं कैसे प्रसन्न रहते हैं. यह बात किससे छिपी है ? जो साग-सब्जी खुली धूप में पकती है उसमें सूर्य की किरणों से 'बिटामिन' जीवन शक्ति बहुत अधिक बढ़ जाती है और उसके सेवन से अनेक रोगों का नाश होता है।

जिन पेड़ पौधों और लताओं को सूर्य का प्रकाश नहीं मिलता वे या तो बढ़ते-पनपते ही नहीं और यदि बढ़े,पनपे भी,तो उनमें ताजगी नहीं रहती। जिन मजदूरों को कारखानों के भीतर काम करना पड़ता है. अंधेरे जेलखानों में बरसों गुजारने पड़ते हैं, खुली धूप और हवा नहीं मिल पाती, वे ठिगने रह जाते हैं, उनके चेहरे पर उदासी छाई रहती है, उनका स्वास्थ्य बुरी तरह गिर जाता है और शरीर नाना प्रकार के रोगों का शिकार बन जाता है। शरीर को स्वस्थ और रोग-मुक्त रखने के लिए सूर्य के प्रकाश की अनिवार्य आवश्यकता है।

मनुष्य—जीवन पर सूर्य का प्रभाव

हमारे यहां प्रारम्भ से ही आरोग्य और दीर्घ-जीवन की प्राप्ति के लिए सूर्य को एक महान् साधन माना जाता रहा है और हम देवता के रूप में [illegible]

भी सूर्य की ही पूजा है और उसके जप का विधान भी यह है कि कमर से ऊपर नंगे शरीर होकर किया जाय अर्थात खुले शरीर पर सूर्य की आरोग्यव किरणें पड़ने दी जायँ। प्रातःकाल सूर्य की किर का पवित्र स्नान मुफ्त में मिलने वाले स्वास्थ्य सुख और आनन्द का अनुपम साधन है। इससे रक्त तो शुद्ध होता है. बल और उत्साह की भी प्राप्ति होती है।

डॉक्टर मूर का कथन है कि-'जिस बालक को धूप से बचाकर रखा जाता है वह सुन्दर और बुद्धिमान बनने के बजाय कुरूप और मूर्ख बनता है। स्विटजरलैंड में जहां सूर्य की सीधी किरणें नहीं पहुँचतीं वहाँ की अंधेरी कोठरियों में जो लोग निवास करते हैं उनकी मूर्खता भरी बातें देख सुनकर वहां पर पहुँचने वाले यात्री आश्चर्य से चकित होकर रह जाते हैं। उनमें अनेक लोग साफ-साफ बोल नहीं पाते, अनेक अन्धे होते हैं, अनेक बहरे तथा कुरूप।" गांवों में रहनेवाले किसानों का स्वास्थ्य शहर की अंधेरी कोठरियों में रहनेवाले लोगों से कहीं अच्छा होता है,इस बात को कौन नहीं जानता ?

अंधेरी कोठरियों का अभिशाप

अंधेरी कोठरियों में रहनेवाले मनुष्य खुले मकानों में रहनेवालों की अपेक्षा अधिक बीमार पड़ते और मरते हैं। इसी कारण यह कहावत बन गई है कि-"Where the sun does nct enter; doctor must" अर्थात्—जिस घर में सूर्य का प्रकाश नहीं आता उस घर में डाक्टर को आना ही होगा। सर जेम्सबाई ने कहा है कि—'सेंटपीटर्सबर्ग में जो सैनिक बिना प्रकाशवाले हिस्से में रहते थे वे प्रकाश में रहनेवाले सैनिकों से तिगुनी संख्या में मरते थे। महामारी फैलने पर देखा जाता है कि अंधेरे स्थानों में रहनेवाले लोग खुले में रहने वालों की अपेक्षा कहीं अधिक उसके शिकार बनते हैं। अतः जिन लोगों को अपने स्वास्थ्य और दीर्घायु

्रकानों में रहें और काम करें जहां सूर्य का खूब प्रकाश आता हो।

सूर्य महान् रोगनाशक वैद्य

हमारे शास्त्रों और आयुर्वेद के ग्रन्थों में सूर्य-प्रकाश की बड़ी महिमा गायी गयी है। उससे अनेक रोग दूर होते हैं। सूर्य-किरणों के सेवन से मनुष्य वात, पित्त और कफजनित सभी व्याधियों का नाश कर सौ वर्ष तक जीवित रह सकता है। भोजन में जिन तत्वों की कमी रहती है वे अनेक अंशों में हमें सूर्य-किरणों से मिल जाते हैं।

हमारे देश के अलावा पारसी, मिस्रवासी, यूनान और इटली के निवासी भी चिरकाल से सूर्य को देवता के रूप में पूजते आ रहे हैं। यूनान में सूर्य की उपासना के लिए बना 'सूर्य-मन्दिर' तो बहुत प्रसिद्ध था। २००० वर्ष पूर्व यूनान का प्रसिद्ध हिपोक्रेटीज सूर्य की किरणों द्वारा भयंकर रोगों चिकित्सा किया करता था। अब तो विदेशों की किरणों से चिकित्सा का कार्य खूब चगा है। सूर्य की रंग-बिरंगी किरणों का रोगों के निवारण के लिए भरपूर प्रयोग ा रहा है। पाचनेन्द्रिय के रोग चर्म रोग, न्तु के रोग तो सूर्य की किरणों से अच्छे जाते हैं, क्षय जैसे भयंकर रोग के भी उससे े के उदाहरण मिले हैं। डाक्टर रोलियर तो एक विकृति के लिए भी आपरेशन के बजाय स्नान का ही प्रयोग करते हैं। डॉक्टर फीनसीन र्य-किरणों द्वारा असंख्य रोग अच्छे करते हैं। कहना है कि बालकों के सम्पूर्ण और ण विकास के लिए सूर्य-किरणों की अनिवार्य कता है। जंगली प्राणी भी जब बीमार तो सचमुच धूप में आकर पड़े रहते हैं और जाते हैं। फिर मनुष्य क्यों तरह तरह की दवाओं का प्रयोग कर और अधिक रोगों ण दे? क्यों न वह भी सूर्य की अद्भुत ाभ उठायें?

ब्रह्मचर्य की सिद्धि

शास्त्र कहता है—"मरणं विन्दुपातेन जीवनं विन्दुधारणात्" अर्थात् वीर्य का पात करना ही मृत्यु और वीर्य धारण करना ही जीवन है।

भगवान शंकर कहते हैं—

न तपस्तप इत्याहुर्ब्रह्मचर्यं तपोत्तमम्।
ऊर्ध्वरेता भवेद् यस्तु से देवो न तु मानुषः॥

अर्थात्—ब्रह्मचर्य से बढ़कर और कोई तप नहीं है। ऊर्ध्वरेता (जिसका वीर्य मस्तिष्क आदि द्वारा उच्च कार्यों में व्यय होता है) पुरुष मनुष्य नहीं प्रत्यक्ष देवता है।

समुद्र तरणे यद्वत् उपायो नौः प्रकीर्तिता।
संसार तरणे तद्वत् ब्रह्मचर्य प्रकीर्तितम्॥

अर्थात् जिस प्रकार समुद्र को पार करने का नौका उत्तम उपाय है उसी प्रकार इस संसार से पार होने का उत्कृष्ट साधन ब्रह्मचर्य ही है।

ये तपश्चतपस्यन्त कौमाराः ब्रह्मचारिणः।
विद्यावेद ब्रत स्नाता दुर्गाण्यपि तरन्ति ते॥

अथात्—जो ब्रह्मचारी, ब्रह्मचर्य रूपी तपस्या करते हैं और उत्तम विद्या एवं ज्ञान से अपने को पवित्र बना लेते हैं वे संसार की समस्त दुर्गम कठिनाइयों को पार कर जाते हैं।

सिद्धे बिन्दौ महायत्ने किंन सिद्धयति भूतले।
यस्य प्रसादान्महिमाममाप्ये तादृशो भवेत्॥

अर्थात्—महान् परिश्रम पूर्वक वीर्य का साधना करने वाले ब्रह्मचारी के लिए इस पृथ्वी पर भला किस कार्य में सफलता नहीं मिलती? ब्रह्मचर्य के प्रताप से मनुष्य मेरे (ईश्वर के) तुल्य हो जाता है।

'ब्रह्मचर्य परंतपः।'

ब्रह्मचर्य ही सबसे श्रेष्ठ तपश्चर्या है।

'एकतश्चतुरो वेदाः ब्रह्मचर्य तथैकतः।"

अर्थात् एक तरफ चारों वेदों का फल और दूसरी ओर ब्रह्मचर्य का फल, दोनों में ब्रह्मचर्य का फल ही विशेष है।

मांगने से मिलता है।

(पं० चन्द्रकिशोर तिवारी शास्त्री, मथुरा)

बाईबिल में परमात्मा ने कहा है—"यदि वास्तव में सचाई के साथ तुम मेरी खोज करोगे तो मैं निस्संदेह तुमको मिलूंगा। यदि सचाई के साथ तुम मुझसे कोई वस्तु मांगोगे तो वह तुम्हें अवश्य दी जायगी। ढूँढो मैं तुम्हें अवश्य मिलूंगा। दरवाजा खट खटाओ वह तुम्हारे लिए अवश्य खोला जायगा। जो माँगता है वह पाता है।"

इस महा वाक्य के ऊपर जितना जितना हम विचार करते हैं उतनी ही अत्यन्त सुदृढ़ सचाई इस वाक्य के अन्दर छिपी पाते हैं। इस दुनियां में बहुतों ने बहुत कुछ पाया है। परन्तु जिनने भी जो कुछ पाया है वह अपने निजी प्रयत्न के बल पर पाया है। परमात्मा की स्पष्ट प्रतिज्ञा है कि मैं देता हूं, मनमानी संपत्तियाँ देता हूं, पर देता उन्हें ही हूं जो सच्चे दिल से मांगते हैं, खोज करते हैं, खट खटाते हैं और पीछे पड़ जाते हैं। माता बालक को तब भोजन देती है जब वह रोता है, बिना माँगे माता से रोटी मिलना भी कठिन है।

आवश्यकता आविष्कार की जननी है। जहां चाह होती है वहां राह निकल आती है। सब लोग अपने कर्मों का फल पाते हैं। शास्त्र में एक महावाक्य है कि—'भला या बुरा जैसा भी कुछ तू है वैसा अपने आप तूने अपने को बनाया है।" मनुष्य अपनी इच्छा शक्ति द्वारा अपने आप को बनाता है। जिसकी आकांक्षा उन्नति के पथ पर चलने की, गौरवान्वित होने की, सौभाग्यशाली बनने की, और ऋद्धि समृद्धि प्राप्त करने की है उसे कोई भी उसके मार्ग से विचलित नहीं कर सकता।

यों तो बहुत से आदमी तरह तरह के मन के लड्डू बनाते हैं, सुखी, समृद्ध होने के बड़े बड़े मनसुवे बांधते हैं परन्तु उन में से सफल बहुत ही थोड़े मनुष्य होते हैं। शेखचिल्ली के से सपने यदि सफल हो जाया करते तो पुरुष, और पौरुष का कोई मूल्य ही इस संसार में न रहता। कोरी इच्छा के साथ प्रयत्न, पौरुष, लगन और दृढ़ता न हो तो वह व्यर्थ है। सफलता की देवी ऐसे लोगों की ओर आंख उठाकर भी नहीं देखती। सिद्धि उन्हें मिलती है जो अपनी अभीष्ट वस्तु के लिए जी जान से प्रयत्न करते हैं।

अनुभवियों का कथन है कि—"उद्योगिनं पुरुष सिंह मुपैति लक्ष्मी, दैवेनदेव मति का पुरुषो वदन्ति।" लक्ष्मी उद्योगी पुरुषों को ही प्राप्त होती है और कायर लोग दैव दैव पुकारा करते हैं। एक अन्य वचन है कि—'कायरा इति जल्पन्ति यद्भाव्यं तद्भविष्यति" कायर लोग ऐसा बकवास करते रहते हैं कि जो होना होगा। "न प्रसुप्तस्य सिंहस्य प्रविशंति मुखे मृगाः" सोते हुए सिंह के मुख में हिरन खुद प्रवेश नहीं करते, वरन् सिंह को ही उन मृगों को पकड़ना और खाना पड़ता है। रामायण का कहन है—'दैव दैव आलसी पुकारा।" भाग्य के भरोसे बैठे रहने से, तरह तरह की कल्पना और जल्पना करते रहने से कुछ प्राप्त नहीं होता। इच्छा को पूर्ण करने के लिये जो निरन्तर उत्साह पूर्वक प्रयत्न करते हैं वे ही सफलता के भागी होते हैं। कवि ने कैसा अच्छा कहा है—

जिन खोजा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठ।
हौं बौरी ढूँढन गई, रही किनारे बैठ॥

जिन्होंने खोजा है, उन्हें मिला है। जो खोजेंगे उन्हें मिलेगा। सफल जीवन महा पुरुषों की ओर जब हम दृष्टिपात करते हैं तो प्रतीत होता है कि उन्होंने विघ्न बाधा, असफलता, कष्ट और कठिनाइयों से पग पग पर संग्राम किया है। नित्य अप्रत्याशित कठिनाइयां उनके मार्ग में आई हैं और नित्य दूने उत्साह के साथ उन्होंने उनसे संग्राम किया है। यदि वे घर के कोने में बैठे बैठे मन के लड्डू खाते रहते, कठिनाइयों को देखकर घबरा

उत्कृष्ट जीवन का मार्ग।

(डाक्टर श्रीदुर्गाशङ्करजी नागर सम्पादक 'कल्पवृक्ष')

मनुष्य को अन्तर में शान्त तथा क्षोभ रहित होना चाहिए अर्थात् शरीर को सदा काम में लगाते रहना चाहिए और भीतरी आत्मा को सदा शान्त रखना चाहिए। चिन्ता, भय, द्वेष इत्यादि विकार मनुष्य के जीवन बल का नाश करते हैं।

ये स्वार्थ पूर्ण प्रवृत्तियां ही मनुष्य के विकास में बाधा डालती हैं। अपने जीवन का सिंहावलोकन करो और तुमको मालूम होगा कि किस प्रकार तुमने अपनी शक्तियों का अपव्यय किया है।

जो मनुष्य अपने मन और बुद्धि को उत्कृष्ट भावना में लीन रखता है, वह उच्च वस्तु से प्रेम करता है और अपने जीवन को भव्य, विशाल और ...य बनाता है, और अपने में असाधारण परिवर्तन ...में समर्थ होता है। भावात्मक विचार तत्काल ...में परिवर्तन कर देते हैं। हमारे मानसिक गुणों ...रिक स्थिति को, आदत को बदल देने का हमारे भावों में है।

...र प्रयत्न छोड़ बैठते तो आज उनका जीवन ...फल दिखाई पड़ता है कदापि वैसा दिखाई ...।

...द्धि के—सफलता के इच्छुकों को बाइबिल का ...चन ध्यान रखना चाहिए कि 'जो सचाई से ...है उसे दिया जाता है।" सचाई से माँगने ...र्थ है पूरे परिश्रम उत्साह और संयम के साथ ...स्तु की प्राप्ति में जांफिसानी के साथ ...। आप यदि सफल मनोरथ होना चाहते ...की सीढ़ी पर चढ़ना चाहते हैं तो घोर ...र दृढ़ इच्छा को अपना साथी बना ...न के ऊपर प्राप्ति निर्भर है। स्मरण ...वाले को ही मिलता है।

अपनी प्रबल इच्छाशक्ति से निकृष्ट भावुकता को एक दम दमन करो, मनोवेगों के नियामक बनो, अपने स्वभाव को वश में रक्खो, आत्म निग्रह का अभ्यास डालो। निकृष्ट भावुकता ही हमारी सब से अधिक अनिष्ट करने वाली है। मनोवेगों के वशीभूत होकर मनुष्य तिनके के समान अग्नि में अपने को भस्मीभूत कर देता है।

नया विचार नया जीवन होता है, इसलिए यदि तुम जीवन को उत्कृष्ट बनाना चाहते हो तो अपने अन्तर में परिवर्तन करो, अर्थात् अपने मन का नवीकरण करो। अपने विचार और भावों को निकृष्ट प्रदेश से ऊँचे उठाओ और आत्मा के उच्च प्रदेश में स्थापित करो।

ज्ञान का अनन्त समुद्र, ऐश्वर्य का महानिधि, आनन्द और शान्ति का परम निधान एक मात्र परमात्मा ही है। उसी का मनन और अखण्ड चिन्तन करो जिससे तुम्हारी स्थिति और आत्मा में विलक्षण परिवर्तन होगा। उस सर्व व्यापक महाप्रभु को जानो जो सब शुभ कामना को पूर्ण कर देता है।

ईश्वर की अनुभूति का दैवी उपाय—यही है कि सूर्योदय से पहिले उठकर अपने बिस्तर पर बैठ जाओ और कम से कम दस मिनट उस महाप्रभु से प्रार्थना करो "हे पिता! मेरा जीवन व्यर्थ और निरर्थक ही सांसारिक भोगों में बीता जा रहा है और अनेक प्रकार के क्लेश, चिन्ता, भय मुझे घेरे रहते हैं। मैं आप के शरण आया हूं। आप दया करके मेरे चित्त की मलीनता मिटाइये, मेरी वृत्तियों को अपने चरणों में लगाइये, जिससे मेरा जीवन सफल हो।"

इस प्रकार प्रार्थना करने के पश्चात् अपने नित्य कर्म में लगो। ऐसी प्रार्थना एक महीने तक लगातार करते रहने से तुम्हारे जीवन में विलक्षण परिवर्तन होगा। यही उत्कृष्ट जीवन का मार्ग है।

महान् जागरण ।

(डा० श्री. रामचरण महेन्द्र एम. ए. डी. लिट् डी.डी.)

———

(गताङ्क से आगे)

पूर्ण मतैक्य हमारी वास्तविक स्थिति है—आज के समाज का सभ्य मनुष्य निज वास्तविक मनः स्थिति से दूर जा पड़ा है। उसके मनः क्षेत्र में भावनाओं तथा आकांक्षाओं के अनेक खंडहर, कब्रें, तथा टूटे हुए अंश पड़े हैं। अनेक वासनाएँ अतृप्तावस्था में ही कुचल दी गई हैं, कितनी ही हसरतों, आशाओं, दबी हुई भावनाओं पर तुषारापात हो चुका है। उसको आज की आकांक्षाएँ तो उन पुरातन आकांक्षाओं की छाया मात्र रह गई हैं।

आदि काल का पूर्व पुरुष देश-काल-समाज के बंधनों से मुक्त था। सभ्यता का मिथ्याडंबर, समाज के वज्र जैसे कठोर नियम, लोक निंदा का भय, सम्प्रदाय की थोथी उलझनें, उचित अनुचित का सीमा बंधन या विवेक का नियंत्रण न होने के कारण उसका भीतरी रागात्मक प्रवृत्तियों, वासनाओं तथा मनोविकारों का वाह्य सृष्टि के साथ उचित सामंजस्य था। अव्यक्त (Unconscious mind)की वासनाओं को पूर्ण परितृप्ति का खुला अवसर मिलता था। प्रेम, क्रोध, ईर्षा, द्वेष, घृणा, हास, उत्साह, आश्चर्य करुणा इत्यादि मनोवेगों का प्रवाह अबाध पूर्ण उन्मुक्त था। उनमें विवेक, सत् असत् तथा प्रयत्न की अनेक रूपता का स्फुरण नहीं हुआ था। विशुद्ध सुख की अनुभूति होने पर दांत निकाल कर, हँसकर, कूदकर सब व्यक्त कर दिया जाता था। दुःख की अनुभूति पर हाथ पांव पटक कर, रोकर चिल्लाकर मन की चोट पर मरहम लगा लिया जाता था। दंड का भय और अनुग्रह का लोभ, या शासन का नियंत्रण न होने के कारण मनोभाव स्पष्ट रूप से व्यंजित होते थे। इस उन्मुक्त काल में हमारे पूर्व पुरुष के मानसिक संस्थान में पूर्ण मतैक्य या समस्वरता (Harmony) विद्यमान थी। व्यक्त (conscious) तथा अव्यक्त (unconscious) मनके पूर्ण मतैक्य (Harmony) का नाम ही मोक्ष है। यही अवस्था पूर्ण शान्ति पूर्ण आनन्द, पूर्ण प्रसन्नता की मनः स्थिति है।

व्यक्ताव्यक्त के संघर्ष का प्रतिफल—अनुभूति के द्वन्द्व से ही सभ्यता का जन्म होता है। उत्कृष्ट कहलाने वाला प्राणी उचित अनुचित का द्वन्द्व लेकर जन्म लेता है। ज्यों ज्यों सभ्यता का विकास होता है, मानव जीवन की जटिलता, इच्छा की अनेक रूपता, तथा विषय बोध की विभिन्नता बढ़ती है। मनुष्य का विवेक तथा औचित्य अनोचित्य का ज्ञान विकसित होता है, शुभ अशुभ, यश अपयश की भावना के कारण मनुष्य का आत्म गौरव उद्दीप्त हो उठता है। तत्पश्चात् समाज का नियन्त्रण बढ़ता है। जैसे जैसे हमारा मनःक्षेत्र विवेक द्वारा सञ्चालित होता है वैसे वैसे देशकाल एवं परिस्थिति के अनुसार अभद्र, प्रतिकूल, समाज से असम्बद्ध वासनाएँ कुचल दी जाती हैं।

मानसिक ग्रन्थियों का निर्माण—समाज में प्रचलित नैतिक वातावरण (Moral Atmosphere) के कारण दबी हुई वासनाएँ (Suppressed impulses) अव्यक्त मन में बैठी रहती हैं। विवेक उन्हें दबाये रहता है इस प्रकार की प्रत्येक वासना दब कर एक मानसिक ग्रन्थि या गुत्थि (Complex) बन जाती है। ऊपर आकर परितृप्ति की बाट देखती रहती है। जब विवेक का नियन्त्रण न्यून होता है तो उभर आती है और परितृप्ति का प्रयत्न करती है। मनोवैज्ञानिकों ने हमारी सब गालियां, मज़ाक, ठठोली, नाच, कूद, अश्लील व्यवहार, स्वप्न उन्माद, कायरता, इन्हीं मानसिक ग्रन्थियों के फल स्वरूप माना है।

डाक्टर फ्राइड के क्रान्तिकारी विचार—प्रसुप्त वासनाओं तथा मानसिक ग्रन्थियों के विषय में

पाश्चात्य विद्वान डा० फ्राइड के विचार सर्वथा क्रान्तिकारी हैं। डा० फ्राइड ने हमारी समस्त क्रियाओं का अव्यक्त की प्रसुप्त वासनाओं के फल स्वरूप माना है। इनमें काम वृत्ति (Sex) को उन्होंने सबसे सबल ग्रन्थि माना है। माता का शिशु का माता के स्तन से दुग्धपान, से लेकर कवियों की कवित्व शक्ति प्रायः सब ही को उन्होंने दबी हुई अव्यक्त की कामवासनाओं के फल स्वरूप माना है। मनुष्य की काम वृत्ति या कामपिपास शान्त न हो सकी। उस का प्रवाह रुद्ध (Obstructed) हो गया और अव्यक्त (Unconscious) में पैठ कर वह ग्रन्थि बन गया। यह प्रसुप्त वासना जब अवसर मिलता है या जब विवेक ढीला पड़ता है व्यक्त मनमें आ जाती है और विभिन्न प्रकार के विकार तथा विचित्र मानसिक तथा शारीरिक चेष्टाओं में प्रकट होती हैं। डाक्टर फ्राइड ने अनेक स्वप्नों का विश्लेषण करके सिद्ध किया है कि मनमें दबी हुई गांठ के फलस्वरूप ही ऐसी विचित्र चेष्टाएँ होती हैं।

मानसिक ग्रन्थियों का प्रभाव—मानसिक ग्रन्थि के अनेक प्रकार हैं। जितनी भावनाएं हैं उतने प्रकार की ग्रन्थिएँ बन सकती हैं। कुछ ग्रंथियाँ प्रायः प्रत्येक व्यक्ति में ही होती हैं कुछ किसी विशिष्ट व्यक्ति में ही होती हैं। इसी प्रकार, कुछ ग्रन्थियाँ सबल तथा कुछ साधारणतः निर्बल होती हैं। कुछ ग्रंथिएँ आनन्ददायक तथा कुछ दुःखदायिनी होती हैं। जब मानसिक ग्रंथि सबल हो जाती है तो उसकी शक्ति-रूपान्तर से व्यक्त होने का उद्योग करती है। साधारण विवेक को तोड़ कर प्रायः वह निकल पड़ती है। कभी २ इसका फल पागलपन होता है। अनेक अद्भुत चेष्टाएँ, मन की क्रियाएँ तथा स्वप्न चेतना का नियंत्रण तोड़ कर दबी हुई वासनाओं के प्रकाशित होने के मात्र हैं।

मानसिक ग्रंथियों का प्रभाव अन्तर्मन से चेतन मन पर दैनिक व्यवहार में चलता रहता है। एक नवयुवक एक युवती के प्रेमपाश में आबद्ध होता है। प्रथम दृष्टि-मिलन में ही उसके अन्तर्मन में काम की भावना जाग्रत हो उठती है। नैतिक बुद्धि उसके मार्ग में बाधा उपस्थित करती है। देश, काल परिस्थिति को देखकर वह उसे दबा डालता है। बस, मानसिक संस्थान में एक गांठ सी पड़ जाती है। अन्तर्मन से उस ग्रन्थि से संयुक्त कामोत्तेजक विचार उसके चेतन मन के सम्पूर्ण क्षेत्र को आवृत्त कर लेते हैं। शनैः २ उसके चेतन मन पर उन्हीं विचारों का आधिपत्य स्थिर हो जाता है जिनकी जड़ें अन्दर बैठी हुई हैं। उसकी सम्पूर्ण मानसिक क्रियाओं के पीछे कामवासना की झलक दीखती रहेगी। उस पर बीतने वाली प्रत्येक घटना, मस्तिष्क में आने वाले सब विचार, उसी ग्रन्थि में जुड़ते जायेंगे। अन्तस्थल की भूमि पर ये विचार उस ग्रन्थि से जुड़कर अंकुरित, पल्लवित एवं फलित हो उठेंगे। ये वृक्ष काँटेदार या मधुर दोनों ही प्रकार के हो सकते हैं। यदि ये काँटेदार हैं तो इनका उन्मूलन करने से मनः शान्ति प्राप्त होगी। ग्रन्थियों की यह परवशता आज के सभ्य मनुष्य को पिंजर बद्ध पक्षी बनाये हुए है।

मानसिक ग्रन्थियों से ग्रस्त व्यक्तियों के उदाहरण—

हमारे दैनिक जीवन के अन्तर्द्वन्द्व अनेक घटनाओं को लेकर ग्रंथियों का निर्माण करते हैं। हमारे एक अध्यापक मित्र की पत्नि को स्नान व धोने का रोग (Washing Mania) हो गया था। वे प्रत्येक वस्तु को तनिक सा छू जाने पर धोने लगतीं। शौच के पश्चात् सब वस्त्र धोतीं। बाल कटा डाले। नल पर मिट्टी की पट्टी लगाई। खाने पीने को तमाम वस्तुओं को बार बार धोतीं। उन्हें यह वहम हो गया कि अन्य सब वस्तुएँ अपवित्र हैं। वहम की अनिष्टकारी ग्रन्थि की छाप

करने पर प्रतीत हुआ कि एक बार अनजाने में वे मेतहर की झाड़ू से छू गईं थीं। अपवित्रता की ग्लानि क्रमशः एक सबल ग्रन्थि बन गई। उसी की यह प्रति क्रिया थी।

डाक्टर दुर्गाशंकरजी ने एक ऐसे व्यक्ति का रोचक वृत्तान्त लिखा है जिसकी मुट्ठी बंधी हुई रहती थी। यह व्यक्ति कभी २ दो तीन घंटे पश्चात् मुक्का मारने का उपक्रम करते। इस चेष्टा से वह बड़े क्षुब्ध थे। मानसिक विश्लेषण में उनसे अपने जीवन की विशेष २ घटनाओं को स्मृति पट पर लाने को कहा गया। बड़े प्रयत्न के उपरान्त उन्हें बहुत दिन पूर्व की एक घटना याद आई। उनका किसी ने बड़ा अपमान किया था। उसका स्मरण करते ही इनका शरीर जकड़ जाता था। इस विद्वेष की, भावना की ग्रन्थि बनकर अव्यक्त में बैठ गई और मुट्ठी बंधी रहने लगी। यह घटना तो मस्तिष्क के किसी कोष्ठ में विस्मृति के गर्त में प्रविष्ठ होगई किन्तु उसकी प्रतिक्रिया मुट्ठी बंधी रह कर हुई। अन्तःकरण से विरोधी भावना को हटाने पर कुछ दिन बाद वह पूर्ववत् हो गए।

कुछ दिन पूर्व मैं हरिद्वार में एक ऐसे व्यक्ति से मिला जो हर की पैड़ी पर बिना गङ्गाजल में प्रवेश किये लोटे से स्नान कर रहा था। देखकर बड़ी उत्सुकता हुई। पूछने पर कहने लगे कि जल में हड्डियें इत्यादि पड़ी हैं अतः दूर से ही स्नान करना ठीक है। अधिक जानपहिचान हो जाने पर उन्होंने निम्न वृतान्त सुनाया "बचपन में कुछ मित्रों के साथ मैं नदी पर सैर करने गया। कुछ लड़के लंगोट बांध कर जल में तैरने उछल कूद कर अनेक क्रीड़ाएँ करने लगे। एक ने कहा—आओ न, दूर क्यों खड़े हो? इतने में पीछे से आकर दूसरे साथी ने मज़ाक में उठा कर गहरे जल में पटक दिया। मैं बहुत छटपटाया, नाक मुँह कान में पानी भर गया और मैं डूब गया। जब पुनः ठीक हुआ तब से मैं पानी

मिस्टर मायर ने अनेक ऐसे स्वप्नों के अध्ययन प्रस्तुत किये हैं जिनकी जड़े मन की किसी ग्रन्थि में ही प्राप्त हुई हैं। एक नवयुवती को स्वप्न में दीखा मानों वह सुनहरे जूते पहिने हुए है' स्वप्न विशेषज्ञ को विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ कि उसने एक दिन पहिले अपने प्रेमी को वैसे जूते पहिने देखा था।

एक मनः रोगी मेरे पास आया और उसने अपने पिता के क्रूर व्यवहार की कथा रो रोकर सुनाई। उसने मुझे बताया कि यद्यपि वह पिता का बहुत आदर की दृष्टि से देखता है किन्तु पिता उससे क्रुद्ध ही है। पिता का रुखा व्यवहार उसके अन्तर्मन में ग्रन्थि बन गया। कुछ दिनों पश्चात् वह पुनः मेरे पास आया। मुझे वह कुछ फीका Depressed) सा प्रतीत हुआ। उसने बताया कि "मैंने आज दो व्यक्तियों को बड़ी बुरा तरह सताये जाते देखा है। उसीका प्रभाव मुझ पर हुआ है। मन भारी २ सा हो रहा है। विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ कि उस दिन प्रातःकाल उसके पास उसके पिता जी का पत्र आया था जिसमें उस पर अनेक दुर्व्यवहारों, कटुबचनों की मार पड़ी थी। मन भारी २ सा होने का कारण तो यह कटु पत्र था किन्तु उसका आरोप दूसरों को अपमानित होते देखना था।

कितनी ही बार देखा जाता है कि काम वासना की ग्रन्थि से ग्रस्त व्यक्ति अपने आपको ब्रह्मचारी दिखाने की चेष्टा करता है। वह दूसरों को ब्रह्मचर्य के नियमों का माहात्म्य समझाता है तथा बाह्य दृष्टि से स्त्रियों को घृणा की दृष्टि से देखता है।

कितने ही व्यक्तियों के अव्यक्त मनःक्षेत्र में हीनत्व की ग्रन्थि (Inferioit Complex) बन जाती है। ऐसा व्यक्ति अपने आपको नगण्य, दीन हीन मानता है। सभा में बोलते शर्माता है, दूसरों से नजर मिलाते डरता है और किसी बड़े दोषी की तरह छिपा छिपा फिरता है।

होली का संदेश।

अनावश्यक और हानिकार वस्तुओं को हटा देने और मिटा देने को हिन्दू धर्म में बहुत ही महत्व पूर्ण समझा गया है। और इस दृष्टिकोण को क्रियात्मक रूप देने के लिए होली का त्यौहार बनाया गया है। रास्तों में फैले हुए कांटे, शूल झाड़ झंखाड़, मनुष्य समाज की कठिनाइयों को बढ़ाते हैं. रास्ते चलने वालों को कष्ट देते हैं, ऐसे तत्वों को ज्यों का त्यों नहीं पड़ा रहने दिया जा सकता, उनकी ओर से न आंख बचाई जा सकती है और न उपेक्षा की जा सकती है। इसलिए हर वर्ष होली पर लोग मिल जुलकर रास्तों में पड़े हुए कँटीले अनावश्यक झाड़ों का बटोरते हैं और उन्हें जलाते हुए उत्सव का आनंद मनाते हैं। इसी प्रकार नाली, गड्ढे, कीचड़. धूलि. कचरा आदि की सफाई करके जमी हुई गन्दगी को हटाते हैं। गली मुहल्लों के कोने कोने को छान डाला जाता है कि कहां गंदगी छिपी हुई तो नहीं पड़ी है, जहाँ होता है वहाँ से उसे हटा कर दूर कर देते हैं।

होली के त्यौहार का छिपा हुआ संदेश यह है कि जमी हुई गन्दगी को दूर करो. रास्ते में बिछे हुए कष्ट दायक तत्वों को हटाओ। बाहर की गली मुहल्लों की गंदगी को साफ करके स्वच्छता और शुद्धता का वातावरण उत्पन्न करना आवश्यक है अन्यथा चैत्र में ऋतु परिवर्तन के साथ साथ यह गंदगी विकृत रूप धारण करके चेचक आदि बीमारियों को और भी अधिक बढ़ा दे सकती है। सफाई का यह बाहरी दृष्टिकोण हुआ भीतरी सफाई करना, मानसिक दोष दुर्गुणों को हटाना भी इसी प्रकार आवश्यक है. अन्यथा अनेक मार्गों के असंख्य प्रकार के अनिष्ट होने की सम्भावना है।

रास्ते में काँटे आते रहने का नियम प्रकृति प्रदत्त है। यदि काँटे सामने न आवें, विघ्न बाधाओं का अस्तित्व न रहे तो मनुष्य की जागरूकता, क्रियाशीलता, चैतन्यता और विचारकता नष्ट हो जायगी, रगड़ में वह शक्ति है कि हथियार को तेज बनाती है, यदि हथियार घिसा न जाय तो वह कुन्द हो जायगा और जङ्ग लगकर कुछ समय बाद वह निकम्मा बन जायगा। मनुष्य जीवन में रगड़ और संघर्ष की बड़ी भारी आवश्यकता है अन्यथा जीवित रहते हुए भी मृत अवस्था के दृश्य देखने पड़ेंगे। जो जातियां अपनी सामाजिक, आर्थिक राजनैतिक विकृतियों को संघर्ष पूर्वक हटाती रहती है, अनावश्यक तत्वों को नष्ट करती रहती है वे जीवित रहती हैं और जो भाग्य भरोसे शुतुर मुर्ग की तरह बालू में मुँह गाढ़ कर निश्चिन्त एवं निष्क्रिय बनती हैं वे गरीबी, गुलामी, बीमारी, बेइज्जती आदि के दुख भोगती हुई नष्ट हो जाती है।

हिन्दू धर्म जीवित और पुरुषार्थी जाति का धर्म है। उसका हर एक त्यौहार जागरूकता और क्रियाशीलता का सन्देश देता रहता है। होली का सन्देश यह है कि भीतरी और बाहरी गन्दगी को ढूँढ ढूँढकर साफ कर डालें और चतुर्मुखी पवित्रता की स्थापना करें एवं मानसिक सामाजिक राजनैतिक विकृत विकारों के कंटक जो रास्ते में बिछे हुए हैं उन्हें सब मिल जुलकर ढूँढ ढूँढ कर लावें और उनमें आग लगाकर उत्सव मनावें। होली मनाने का यही सच्चा तरीका है। अश्लील अपशब्द बकना, कीचड़ मिट्टी मनुष्यों पर फेंकना यह तो पशुता का चिन्ह एवं असभ्यता है इससे तो दूर ही रहना चाहिए।

सात्विक सहायताएं।

१५) राजकुमारी रत्नेश ललन, मैनपुरी
२) श्री अम्बाप्रसादजी भटनागर पुवांया
१) श्री मोहनलालजी देशनोक
१) ला० मिट्ठनलालजी शामली,
१) पं० रामकरण शर्मा जयपुर
१) श्री गौरीशङ्करजी चारआलो, आसाम
१) श्री मगनलालजी जलपाई गुड़ी

मन जीता तो जग जीता ।

[लेखिका—कुमारी कैलाश वर्मा]

जैसे शत्रु से युद्ध करते समय इस बात का ध्यान रखना होता है कि न जाने कब आक्रमण हो जाय, कब किस ओर से किस रूप में शत्रु प्रकट हो जाय, उसी प्रकार मन रूपी शत्रु के प्रत्येक कार्य पर तीव्र दृष्टि रखना उचित है । जहाँ मन तुम्हें अपने वश में करके उलटा सीधा कराना चाहे वहीं उसके व्यापार में हस्तक्षेप करना चाहिये ।

मन बड़ा बलवान् शत्रु है, इससे युद्ध करना भी अत्यन्त दुष्कर कृत्य है । इससे युद्ध काल में एक विचित्रता है । यदि युद्ध करने वाला दृढ़ता से युद्ध में सलग्न रहे, निज इच्छा शक्ति को मन के व्यापारों पर लगाये रहे तो युद्ध में सलग्न सैनिक का शक्ति अधिकाधिक बढ़ती है और एकदिन वह इस पर पूर्ण विजय प्राप्त कर लेता है । यदि तनिक भी इसकी चंचलता में बहक गए तो यह तोड़ फोड़ कर सब कुछ नष्ट भ्रष्ट कर डालता है ।

मन को दृढ़ निश्चय पर स्थिर रखने से मुमुक्षु की इच्छा शक्ति प्रबल होती है । मन का स्वभाव मनुष्य के अनुकूल बन जाने का है । उसे कार्य दीजिए । वह चुपचाप नहीं बैठना चाहता । यदि तुम उसे फूल फूल पर विचरण करने वाली तितली बना दोगे तो यह तुम्हें न जाने कहाँ कहाँ की खाक छनवायेगा । यदि तुम इसे उद्दंड रक्खोगे तो यह रात दिन भटकता ही रहेगा पर यदि तुम इसे चिंतन योग्य पदार्थों में स्थिर रखने का प्रयत्न करोगे तो यह तुम्हारा सबसे बड़ा मित्र बन जायेगा ।

जब जब तुम्हारे अन्तःकरण में वासना का प्रबल जंग उत्पन्न हो निश्चयात्मिक बुद्धि को जाग्रत करो । मन से थोड़ी देर के निमित्त पृथक् होकर इसके व्यापारों पर तीव्र दृष्टि रक्खो । बस, विचार शृंखला टूट जायेगी और तुम इसके साथ चलायमान न होंगे । मन के व्यापार के साथ निज आत्मा की समस्वरता न होने दो । इसी अभ्यास द्वारा यह आज्ञा देने वाला न रह कर सीधासाधा आज्ञाकारी अनुचर बन जायेगा—

मन लोभी, मन लालची, मन चंचल मन चौर ।
मन के मत चलिए नहीं, पलक पलक मन और ॥

प्रलोभन के आगे न झुकिये ।

[प्रोफेसर मोहनलाल जी वर्मा एम. ए. एल. बी.
अध्यक्ष दर्शन विभाग, हर्बर्ट कालिज, कोटा]

आध्यात्मिक उन्नति का आधार इस महान् तत्त्व पर निर्भर है कि साधक प्रलोभन के सामने सर न झुकाए । विषय-वासना, क्रोध, घृणा स्वार्थ के विचार से सन्निविष्ट हो कर प्रलोभन हमारे दैनिक जीवन में प्रवेश करते हैं । वे इतने मनोमोहक, इतने लुभावने, इतने मादक होते हैं कि क्षणभर के लिए हम विक्षिप्त हो उठते हैं । हमारी चित्तवृत्तियां उत्तेजित हो उठती हैं और हम पथ भ्रष्ट हो जाते हैं ।

विषयों में रमणीयता का भास बुद्धि के विपर्यय से होता है । बुद्धि के विपर्यय में अज्ञान-सम्भूत अविद्या प्रधान कारण है । इस अविद्या के ही कारण हमें प्रलोभन में रमणीयता का बोध होता है ।

प्रलोभन में दो तत्त्व मुख्यतः कार्य करते हैं—उत्सुकता तथा दूरी । प्रारम्भिक काल में आदि पुरुष का पतन उत्सुकता के कारण ही हुआ । जिस वस्तु से दूर रहने को कहा जाता है उसीके प्रति उत्सुकता उत्पन्न होती है और औत्सुक्य से प्रभावित होकर हमें रमणीयता का भास होता है । इसी भाँति जो वस्तुएँ हम से दूर हैं उनमें रमणीयता का आकर्षण प्रतीत होता है । वास्तव में रमणीयता किसी वस्तु में नहीं होती, वह तो हमारी कल्पना तथा उत्सुकता की भावनाओं की प्रतिच्छाया (Reflection) मात्र है ।

सच्चा चिकित्सक गोल्डस्मिथ

[लेखिका — श्रीमती प्रीतमदेवी महेन्द्र, साहित्य रत्न]

सुप्रसिद्ध अंग्रेजी कवि गोल्डस्मिथ ने अपने प्रारम्भिक काल में डाक्टरी सीखी थी और चिकित्सा से ही धनोपार्जन करते थे। वह बड़े उदार हृदय व्यक्ति थे और अपने पड़ौसियों की सहायता करने को सदैव प्रस्तुत रहते थे। उनके पास जो कुछ होता था उसमें सभी का भाग रहता था।

एक दिन एक स्त्री उनके चिकित्सालय में आई और कहा कि "मेरे पतिदेव अत्यन्त बीमार हैं आप चल कर उनकी अवस्था देख लीजिए, वे कुछ भी नहीं कर सकते। जब तक आप चिकित्सा न करेंगे, वे पुनः स्वस्थ न हो सकेंगे।" गोल्डस्मिथ ने हैट उठाया और उस निर्धन स्त्री के साथ चल पड़े। वे जब गृह में प्रविष्ठ हुए तो उन्हें ग़रीबी का भयंकर ताण्डव दृष्टिगोचर हुआ। गृहस्वामी को काफ़ी दिनों से कोई मज़दूरी प्राप्त न हुई थी। घर में दाना था न लकड़ी।

इन से वार्त्तालाप करने के पश्चात् गोल्डस्मिथ गृहस्वामिनी की ओर आकृष्ट होकर बोले — सायंकाल मेरे हास्पिटल में आओ तो मैं तुम्हें औषधि दूँगा जिससे तुम्हारे पति का लाभ होजायगा।

उसी सांयकाल को स्त्री उसके चिकित्सा में पहुँची और गोल्डस्मिथ ने उसे एक छोटा सा डिब्बा दिया जो कि काफ़ी भारी था। वह बोले — लो इस बक्स में तुम्हारे पति की औषधि है। इसी में दवाई सम्बन्धी अन्य आवश्यक बातों की सूचनाएँ भी हैं। यदि तुम सावधानी से प्रयोग में लाओगी तो पुनः तुम्हारे पति भले चंगे हो जायेंगे।

स्त्री चली गई। उसे गोल्डस्थि की चिकित्सा पर भरोसा था। अपने पति के पलंग के पास बैठ गई और बक्स खोला। वह रुपयों से भरा था और एक काग़ज के टुकड़े पर बड़े बड़े अक्षरों में लिखा था —

"आवश्यकता के समय प्रयोग में लाया जाय।"

यह धन गोल्डस्मिथ के घर की समस्त पूँजी थी। दूसरे दिन का खर्च चलाने के लिए उन्हें पड़ौसी से उधार लेना पड़ा था।

साधन यथारुढ़ होने से पूर्व आप यह निश्चित लीजिए कि प्रलोभन चाहे जिस रूप में आवे, उसे आत्म समर्पण न करेंगे। अल्प सुख विशेष ही पूर्ण सुख मान कर उससे परितृप्त न होंगे, वश होकर नहीं बैठेंगे विषयासक्ति के शिकार बनेंगे, अपने मनःक्षेत्र से कुत्सित प्रलोभनों की उखाड़ फेकेंगे।

प्रलोभन दुर्बल हृदय की कल्पना मात्र है। दुर्बल चित्त वालों के चंचल मन में प्रलोभन एक छोटी सी तरंग के समान आता है किन्तु आश्रय पाकर वह वृहत् रूप धारण कर लेती है और साधक को डुबो देता है।

पतन का मार्ग सदैव ढालू और सुगम होता है। गिरते हुए नहीं, गिर जाने पर मनुष्य को अपनी चोट का भान होता है और कई बार तो यह चोट इतनी भयंकर होती है कि वह मनुष्य को जीवन पर्य्यन्त के लिए पंगु कर देता है। अतः प्रलोभन से सावधान रहिए।

प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिये, बल्कि सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझना चाहिये।

× × ×

मत निश्चित करनेमें सावधानी

(श्रीयुत सेठ अचलसिंहजी M. L. A आगरा)

———

किसी भी व्यक्ति की परीक्षा कई प्रकार से हो सकती है – जैसे उसके साथ रहने से, बात-चीत करने से, साथ में सफर करने से, उसके बारे में कुछ पढ़ने से या किसी आदमी से बात चीत करने से, जो उसके साथ रहता हो इत्यादि।

किसी व्यक्ति से सिर्फ एक मौके पर बात चीत करने से या बर्तने से उसके बारे में फौरन राय कायम नहीं कर लेनी चाहिए।

मान लो कि कोई मनुष्य किसी चिन्ता या दुःख में बैठा हुआ है और कोई व्यक्ति उसके पास जाकर अपनी इच्छा जाहिर करता है। उसके उत्तर में उस समय वह यह कह देता है कि इस समय मुझे माफ कीजिए। इससे अगर इच्छा जाहिर करने वाला यह ख्याल करे कि वे बड़े आदमी हैं और घमंड के मारे बात नहीं करना चाहते और इस प्रकार वह अपनी राय कायम कर ले, तो क्या यह उचित है ? इसलिए प्रत्येक विचारशील मनुष्य को समझ-सोच कर राय निश्चित करनी चाहिये।

किसी आदमी के गुण या अवगुण उसके जीवन के केवल एक अङ्ग को लेकर नहीं जाने जा सकते। मनुष्य की परीक्षा प्रायः उसके घरेलू और सार्वजनिक जीवन दोनों को दृष्टिगोचर रखने से हो सकती है। सभव है कि उसके नौकर-चाकर, घर के दूसरे सदस्य या स्त्री इत्यादि जो राय उसके बारे में रखते हों, उसमें और-और लोगों की राय में, जो उसके साथ व्यापार आदि में सम्बन्ध रखते हैं अन्तर हो। मनुष्य की मनोवृत्ति को जानना बड़ी जटिल समस्या है। उसका स्वभाव किस समय, किस बात से प्रेरित होकर बदलेगा, साधारणतः यह बतलाना कठिन है।

लार्ड राबर्ट थे तो बड़े बहादुर सेनापति, पर बिल्ली से डरते थे। उन्हें बिल्ली से डरते देख कर कौन कह सकता था कि वे एक बड़े साम्राज्य के सेनाध्यक्ष हैं ? परंतु थे वे ऐसे प्रबल सैनिक कि जिनका लोहा उनके बहुत से प्रतिद्वंद्वी लोगों को मानना पड़ा था। इसलिए किसी की एक कमजोरी देखकर उसके सारे जीवन पर लाञ्छन न लगाना चाहिए।

एक दिन सभा में एक सज्जन का एक मित्र से वाद-विवाद हो गया। पाँच-छः दिन बाद वे सड़क पर मिले और सामना बचाते हुए बगल से निकल गये। उन्होंने सोचा कि वे उस दिन की बहस से अप्रसन्न हो गये हैं, इसीलिये उन से नहीं बोले परंतु दो ही दिन बाद मालूम हुआ कि उस दिन उनकी बहिन का देहांत हो गया था, इसलिये परेशानी की हालत में वे बगल से बिना बात चीत किये ही निकल गये थे। इसके बाद जब वे मिले, तो उन्होंने पूर्ववत् स्नेह प्रकट किया। इसलिये अगर कोई इस प्रकार की घटना हो जाय, तो हमें उसे उदारता की दृष्टि से देखना चाहिये। आज-कल प्रायः ऐसा देखा जाता है कि जो मनुष्य फिजूल-खर्ची होता है, उसे फैय्याज़-दिल और जो फिजूल-खर्ची नहीं करता अर्थात मितव्ययी होता है, उसे कंजूस कहते हैं।

एक समय का जिक्र है कि एक समाज विशेष का डेप्यूटेशन एक फैय्याज़-दिल अमीर के पास गया और कालेज के वास्ते चन्दा मांगा। इस पर उन्होंने फरमाया कि मेरे पास इस कदर खर्च है कि मैं कोई माकूल रकम नहीं दे सकता। बाद में डेप्यूटेशन एक मितव्ययी पुरुष के पास गया और चन्दा मांगा। उस समय वे सज्जन सिगरेट सुलगा रहे थे। उन्होंने सिगरेट सुलगा कर जो दियासलाई की आधी लकड़ी बची, उसे दियासलाई के बक्स में रख दिया। डेप्यूटेशन के लोगों

नसे अंदाज लगाया कि जब ये इतने लोभी
ो हमको क्या दान देंगे ? लेकिन जब डेप्यू-
ा के लोगों ने उनसे दान के वास्ते प्रार्थना की,
ोंने चेक उठा कर सामने रख दी और
ा कि आप जितनी रक़म कहें, भर दी जाय।
टेशन ने इसको महज़ मजाक समझा और
ने ख्याल से एक बहुत बड़ी रक़म .000)
मांगी। मितव्ययी सज्जन ने फौरन चेक काट
दे दिया। इस पर उन लोगों को बड़ा आश्चर्य
ा और अपनी ग़लतफ़हमी दूर करने के वास्ते
रना संदेह उन्हें बताया। तब उन्होंने कहा कि
फिजूल एक पैसा खर्च करना बुरा समझता
क्योंकि इस प्रकार थोड़ा-थोड़ा बचाने से
ुत इकट्ठा हो जाता है, जिसको सत्कार्य में
ाना मैं अपना कर्तव्य समझता हूं।

आज-कल प्रायः ऐसा देखा जाता है कि
दि किसी ने किसी के बारे में कोई बात देखी या
नी, तो फौरन अपनी राय कायम कर लेता है।
सा करना अनुचित है। उचित तो यह है कि
हिले इसके कि हम किसी निश्चय पर आवें,
सको काफी विचार कर लेना चाहिए। प्रायः
सा देखा जाता है कि बहुत से स्वार्थी लोग अपने
ीच मन्तव्यों को पूरा करने के अर्थ या किसी को
दनाम करने के लिए मजाक करने के विचार
र ऐसी-ऐसी बातें बनाकर उड़ा देते हैं कि
जससे मित्रों में तथा जनता, समाज या जाति में
उसकी बदनामी हो जाती है। इसलिए प्रायः
सभी समझदार मनुष्यों के लिये यह अत्यन्त आव-
श्यक है कि अगर कोई ऐसी बात सुनें तो
किसी निश्चय पर आने से पहिले उसकी जांच
कर लें। अगर मुनासिब हो तो किसी के जरिये
बात चीत कराकर मामले को साफ कर लें। किसी
बात को सोचे समझे बिना ही मान बैठने से
बड़े-बड़े नुकसान और झगड़े हो जाया करते हैं।

पथप्रदर्शक चरित्रवान ही हों।

(श्री. प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारी)

मैं जहां जहाँ भी गया हूं मैंने सङ्कीर्तन कर्ताओं के विषय में कई तरह की बातें सुनी हैं। कुछ लोगों ने कहा है—'संकीर्तन मंच पर कुछ ऐसे लोग घुस आये हैं, जो पहले नाटक, थियेटरों में नाचते गाते थे। जिनके कंठ अच्छे हैं। वे सभा में नाचकर, गाकर, अपने हाव भाव दिखाकर, जनता को प्रभावित करते हैं और फिर जनता में अत्याचार दुराचार करके अपनी कुत्सित भावनाओं की पूर्ति करते हैं। यह बड़ी चिन्ता की बात है।" ये पेशेवर लोग जहाँ जायँगे वहीं दूषित वातावरण पैदा करेंगे। इनका कोई धर्म नहीं, कोई सिद्धान्त नहीं, इनका टका धर्म है और ये टके के पीछे ही सब बन जाते हैं। ऐसे लोग सभी समाजों में घुस जाते हैं।

मेरी प्रार्थना इतनी ही है कि ऐसे लोगों को भरसक संकीर्तन समारोहों में न बुलाया जाय। जिनका जीवन सदाचार मय नहीं, जो स्वयं आचार भ्रष्ट है, वे नाम की आड़ लेकर पाप ही करेंगे सदाचार रहित लोगों का पेशे वाला कीर्तन जनता को रिझाने के ही लिए है। ऐसे लोग नाम संकीर्तन करते ही नहीं। इधर उधर के पद गाकर इधर उधर की हँसी दिल्लगी की बातें सुनाकर जनता का मनोरंजन करते हैं। अतः ऐसे लोगों से संकीर्तन पर भी लोग तरह तरह के आक्षेप करने लगते हैं।

आप कहेंगे—"जब भगवन्नाम कीर्तन पतित पावन है तो आप ऐसे पतितों से डरते क्यों हैं? उन का भी उद्धार होगा नाम के लिए तो यहाँ तक कहा है कि – चाहे दुष्ट चित्त से भी स्मरण क्यों न करें हरिनाम पापों का नाश करता ही है, जैसे बिना इच्छा के भी अग्नि छूने से वह जला ही देगी।"

ठीक है, यह हम कब कहते हैं कि वे भाग

आंवले की महिमा।

(श्री० सुखदेवप्रसादजी खत्री, कानपुर)

आंवला आयुर्वेद-यूनानी और डाक्टरी मत से बहुत ही स्वास्थ्य बर्धक और रोग नाशक फल साबित हुआ है। इसमें आयुष्य वर्द्धक विटामन, तथा विष नाशक, रक्तशोधक, बुद्धिवर्धक, बलकारक, अग्नि दीपक तत्व इतने अधिक हैं कि आंवले को सेवन करके मनुष्य बहुत लाभ उठा सकता है। इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए हमारे धर्म ग्रन्थों में आंवले का महात्म्य सविस्तार वर्णन किया गया है।पद्मपुराण सृष्टि खंडसे उभृत करकेआँवलेकामहत्व पाठकों के सामने इस आशा से उपस्थित कर रहा हूं कि इस उपयोगी फल के गुणों से हम लोग अधिक लाभ उठावें।

कार्तिकेयजी ने पूछा—"हे भगवान्! सब लोगों के हित के लिए यह बतलाइये कि उत्तम फल कौन है?"

"भगवान से कहा—हे तात! आंवले का फल समस्त लोकों में प्रसिद्ध और परम पवित्र है। यह पवित्र फल विष्णु भगवान को प्रसन्न करने वाला एवं शुभ माना गया है। इसके सेवन करने से मनुष्य पापों से मुक्त हो जाते हैं। आंवला खाने से आयु बढ़ती है, उसका जल पीने और स्नान करने से दरिद्रता दूर होती है तथा सब प्रकार के ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं। हे कार्तिकेय! जिस घर में आंवला सदा मौजूद रहता है वहाँ दैत्य और राक्षस नहीं जाते। जो दोनों पक्षों में एकादशीको आंवलेसे स्नान करता है उसके सब पाप (रोग) नष्ट हो जाते हैं और वह श्री विष्णु लोक में सम्मानित होता है। हे षड़ानन! जो आंवले के रस से अपने केश साफ करता है वह पुनः माता के स्तन का दूध नहीं पीता। जहां आवले का फल मौजूद होता है वहां भगवान विराजते हैं और ब्रह्माजी तथा सुस्थिर लक्ष्मीजी का भी वास होता है। इसलिये अपने घर में आंवला अवश्य रखना चाहिए। जो आवले का मुरब्बा एवं नैवेद्य अर्पण करता है उससे भगवान संतुष्ट रहते हैं।"

"तीर्थों में निवास करने एवं तीर्थ यात्रा करने से तथा नाना प्रकार के व्रतों से जो फल प्राप्त होता है वही आंवले के फल का सेवन करने से मिल जाता है। रविवार सप्तमी, संक्रांति, शुक्रवार, षष्ठी, प्रतिपदा, नवमी और अमावस्या को आँवले का परित्याग कर देना चाहिए। जिस मृतक के मुख, नाक, कान अथवा बालों में आवले का फल हो वह विष्णुलोक को जाता है। जो मनुष्य शरीर में आंवले का रस लगाकर स्नान करता है उसे यज्ञ का फल प्राप्त होता है। उसके दर्शन एवं स्पर्श से पापी जन्तु (रोग कीटाणु) भाग जाते हैं तथा कठोर एवं दुष्ट ग्रह भी पलायन कर जाते हैं।"

आँवला रोग नाशक, स्वास्थ सुधारक और बुद्धि वर्धक होने के कारण उसके सेवन से मनुष्यों की शारीरिक और मानसिक स्थिति सुधरती है। फल स्वरूप उसे लौकिक और पारलौकिक सम्पदाऐं प्राप्त होती हैं। सद्बुद्धि, स्वस्थ चित्त और शान्त जीवन रहने से धर्म का सञ्चय होता है स्वर्ग एवं

का नाम कीर्तन न करें। करें-खूब करें दिन रात्रि करें, भगवन्नाम तो कभी व्यर्थ जायगा ही नहीं, किन्तु उन्हें उपदेशक या आचार्य के स्थान पर बिठा कर उनका आदर्श लोगों के सामने रखना अनुचित है। जिनका चरित्र शुद्ध नहीं है और जो केवल मात्र अर्थ लोलुप ही बनकर आये हैं उनका उद्देश्य ही दूसरा है। वे अपने आप कीर्तन करें, उन्हें मना कौन करता है। मनुष्य का चरित्र ही मनुष्य के गुणों को बढ़ाता है। अतः सकीर्तन प्रेमियों को, संकीर्तन करने वालों को ऐसे लोगों से यथा शक्ति रहना चाहिए।

'शठे शाठ्यं समाचरेत्'

(श्री. स्वामी चिन्दानंदजी सरस्वता)

—o—

महाराजा धृतराष्ट्र के लघु भ्राता नीति के महा पण्डित विदुर ने अपने नीति वाक्यों (विदुर-नीति) में बड़े जोरदार शब्दों में जैसे से तैसा बर्तने की आज्ञा दी है। यथा—

कृते प्रतिकृतिं कुर्याद्धिंसिते प्रतिहिंसितम्।
तत्र दोषं न पश्यामि शठे शाठ्यं समाचरेत्॥

(महाभारत विदुरनीति)

अर्थात्—जो जैसा करे उसके साथ वैसा ही बर्ताव करो। जो तुम्हारी हिंसा करता है, तुम भी उसके प्रतिकार में उसकी हिंसा करो! इस में मैं कोई दोष नहीं मानता, क्योंकि शठ के साथ शठता ही करने में उभय पक्ष का लाभ है। श्री कृष्ण जी ने भी ऐसा ही कहा है। यथा—

ये हि धर्मस्य लोप्तारो वध्यास्ते मम पाण्डव।
धर्म संस्थापनार्थं हि प्रतिज्ञैषा ममाव्यया॥

(महाभारत)

हे पाण्डव! मेरी प्रतिज्ञा निश्चित है, कि धर्म की स्थापना के लिए मैं उन्हें मारता हूं, जो धर्म का लोप (नाश) करने वाले हैं।

वेदादि शास्त्रों के प्रमाणों से यह तो निश्चय हो गया कि आत्मरक्षा अथवा देशहित के लिए दुष्टों, आततायियों तथा राक्षसों का मारना न्याय है।

यहां एक प्रश्न उपस्थित होता है कि — — कभी किसी निरपराधी पर आक्रमण करे तो इस पर आर्य का विचार है, कि छली को छल से मारने संकोच न करे—अर्थात् छल, कपट, आदि से भी शत्रु को मार देना चाहिए। जैसे समय में यदि नियम और अनियमों के गोरखधन्धे में फँसा रहेगा, तो कार्य सिद्धि नहीं होगी।

इसके लिए वेद में आज्ञा है कि जो मायावी, छली, कपटी अर्थात् धोखे बाज है, उसे छल, कपट अथवा धोखे से मार देना चाहिए। यथा—

'मायाभिरिन्द्रमायिनं त्वं शुष्णमवातिरः।

ऋग्वेद १। ११। ६।

अर्थात हे इन्द्र! मायावी, पापी, छली तथा जो दूसरों को चूसने वाले हैं, उनको तू माया से पराजित करता है। इसमें 'मायाभिरिन्द्र मायिनं' वाक्य पर विशेष ध्यान देना चाहिए। स्पष्ट लिखा है कि मायावी को माया से मार दो।

महाभारत में भी श्री कृष्ण जी ने—दुर्योधन-भीम गदा युद्ध के अवसर पर भीम को यही मंत्रणा दी थी कि हे भीम दुर्योधन ने तुम्हारे से बहुत छल किये हैं, अब तू यदि इसे जीतना चाहता है तो छल कपट से मारो अन्यथा इसे नहीं जीत सकोगे। यथा—

मायिनं तु राजानं माययैव निकृन्ततु।
भीमसेनस्तु धर्मेण युध्यमानो न जेष्यति॥
अन्यायेन तु युध्यन् वै हन्यादेव सुयोधनम्।

भीमसेन धर्म से युद्ध करता हुआ दुर्योधन को नहीं जीत सकता। यदि तू छल से युद्ध करेगा तो सुयोधन (दुर्योधन) को जीतेगा अतः छली दुर्योधन को तुम्हें छल से ही मारना चाहिये।

उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध किया गया है कि सत्य और अहिंसा को मानने वाले ऋषि-महर्षि भी देश व जाति की रक्षा के लिए जैसे को तैसा उत्तर देने और मिथ्या हिंसा न करने की आज्ञा देते रहे हैं। वेदादि शास्त्रों की दृष्टि से और लोक कल्याण दृष्टिसे असत्यहुए और हिंसा भी वास्तव में सत्य और अहिंसा हैं।

मानवता की पुकार।

[रचयिता—श्री महावीर प्रसाद विद्यार्थी, टेढ़ा—उन्नाव]

अब न रक्त का प्यासा मानव, मानव का संहार करे।

हँसें दिशाएँ मोदमयी अब पुलक उठे नीलाभ गगन,
रसमय कर दे शुष्क हृदय को मादक-परिमल-मलय-पवन,
क्रन्दन—क्रीड़ा—भूमि बने यह नन्दन का सुख-शान्ति सदन,

मुक्त—कुन्तला मानवता फिर हो विमुक्त शृङ्गार करे।

हो न प्रवाहित वसुधा-तल पर मानव—शोणित की धारा,
मिटे विषम—यन्त्रणा—मयी यह क्रूर शिलाओं की कारा,
पेट काटकर मानव का घर भरे न दानव हत्यारा,

दो दाने के लिए न मानव अब यों आर्त पुकार करे।

जहाँ बरसती आग वहाँ अब बरसें सुन्दर मदुल सुमन,
छिड़े प्रेम—सङ्गीत, गूँजता जहां शतघ्नी का गर्जन,
बिखरे निर्मल हास, जहां हैं तलवारें करतीं झन झन,

बँधा बन्धुता के बन्धन में विश्व विमुक्त विहार करे।

मानव को देखे मानव अब पलक—पांवड़े बिछ जाएँ,
रुला-रुला कर हा! न किसी को हम अपना मन बहलाएँ,
यों न अस्थि—कङ्कालों को हा! जठरानल में तड़पाएँ,

जय-जयकार समोद सत्य का अब सारा संसार करे।

घोल रहा है रे प्राणी! क्यों गरल सुधामय जीवन में,
बना रहा है कुण्ड नर्क का तू ही तो अपने मन में,
चुभन मिलेगी शूलों की तब फूल मिलेंगे इस बनमें,

रहे द्वेष-व्यापार न मानव का मानव से अब
अब न रक्त का प्यासा मानव, मानव का संहार करे॥